

मानव जीवन में जातक का महत्त्व



डॉ. चन्द्रमौली रैणा
सहायकाचार्य, ज्योतिषविभाग,
राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान
(मानित विश्वविद्यालय)
श्रीरणवीरपरिसर, कोट-भलवाल, जम्मू

भूमिका – विधात्रा लिखिता मासौ लललाटे अक्षर मालिका ।

दैवज्ञस्ताम् पठेत् व्यक्तं होरा निर्मलचक्षुषा ॥

ज्योतिष के आचार्य होरा शास्त्र को पांच भागों में विभाजित किया है। यथा – जातक, ताजिक, रमल, प्रश्न, स्वप्न आदि। इनमें से सबसे अधिक प्रसिद्ध जातक है। ज्योतिष के विद्वान तो कभी कभी जातक को ही होराशास्त्र की संज्ञा देते हैं। यथा -

जातकमिति प्रसिद्धं यल्लोके तदिह कीर्त्यते होरा ।

अथवा दैवविमर्शनपर्यायः खल्वयं शब्दः ॥ इति

जन्मपत्री में प्राणियों की जन्मकालिक ग्रहस्थिति से जीवन में होनेवाली शुभ अथवा अशुभ घटनाओं का निर्देश किया जाता है। जन्मपत्री का स्वरूप, फलादेश विधि और संसार के अन्य देशों एवं संस्कृतियों में उसके स्वरूप तथा शुभाशुभ निर्देश की प्रणालियों में बहुत सी चीजें दर्शित व बताई जाती आकाश में दो प्रकार के प्रकाश पिंड दिखाई देते हैं। प्रथम वे जो स्थिर दिखाई पड़ते हैं, नक्षत्र कहलाते हैं। दूसरे वे जो नक्षत्रों के बीच सदा अपना स्थान परिवर्तित करते रहते हैं, ग्रह कहलाते हैं। पृथ्वी अपनी धुरी पर प्रति चौबीस घंटों में पश्चिम से पूर्व की ओर घूम जाती है जिससे सभी ग्रह और नक्षत्र पूर्व में उदित होकर पश्चिम में जाते तथा अस्त होते दिखाई पड़ते हैं। किंतु प्रति दिन ध्यान से देखने पर पता चलता है कि ग्रह नित्य आकाशीय पिंडों की यात्रा के विपरीत, पश्चिम से पूर्व की ओर चला करते हैं। इस प्रकार सूर्य जिस मार्ग से चलकर वर्ष में नक्षत्रचक्र की एक परिक्रमा पूरी करता है, उसे क्रांतिवृत्त (ecliptic) कहते हैं। प्राचीन ज्योतिषियों ने इसी क्रांतिवृत्त का बारह भागकर उन्हें राशि (sign) की संज्ञा दी है। इनमें कुछ तारापुंजों से जीवधारियों जैसी आकृतियाँ बन जाती हैं। राशियों के नाम उन्हीं जीवों के अनुसारेण -, वृष, मिथुन, कर्क (केकड़ा), सिंह, कन्या, तुला, (तराजू), बृश्चिक (बिच्छू), धनु (घड़ियाल) मकर (धनुष), कुंभ (घड़ा), मीन (मछली) रखे गए हैं।

जातक का इतिहास -

वर्तमान समय में राशिचक्र के बारह भाग कर जन्मकुंडली के फलादेश की जो प्रणाली प्रचलित है इसका उल्लेख भार के प्राचीन वैदिक साहित्य में नहीं है। किन्तु अथर्व ज्योतिष में बहुत पहले से ही इस पद्धति के मूल तत्व निहित हैं। इसमें राशिचक्र के २७ नक्षत्रों के नौ भाग करके तीन-तीन नक्षत्रों का एक-एक भाग माना गया है। इनमें प्रथम 'जन्म नक्षत्र', दसवाँ 'कर्म नक्षत्र' तथा उन्नीसवाँ 'आधान नक्षत्र' माना गया है। शेष को क्रम से संपत्, विपत्, क्षेम्य, प्रत्वर, साधक, नैधन, मैत्र और परम मैत्र माना गया है, जैसे-

- १ से ९ -- जन्म नक्षत्र
- १० से १८ -- कर्म नक्षत्र
- १९ -- आधान नक्षत्र
- २० -- संपत्कर
- २१ -- विपत्कर
- २२ -- क्षेम्य
- २३ -- प्रत्वर
- २४ -- साधक
- २५ -- नैधन (मृत्यु)
- २६ -- मैत्र
- २७ -- परममैत्र

इनमें जन्म, संपत् और नैधन (मृत्यु) अर्थात् १, २ और ७, द्वादश भाववाली जन्मकुंडली के १, २ और ८ स्थानों से मिलते हैं। अथर्व ज्योतिष में दसवाँ कर्म नक्षत्र है। आधुनिक पद्धति में भी दशम स्थान कर्म है। इससे सिद्ध है कि अथर्व ज्योतिष में नौ स्थान वर्तमान कुंडली के बारह स्थानों के किसी न किसी स्थान में अंतर्भुक्त हो जाते हैं जो मेष आदि संज्ञाओं के प्रचार में आने के पहले ही से हमारी फलादेश पद्धति में विद्यमान थे। पूर्व क्षितिज में लगने वाले नक्षत्रों को लग्न नक्षत्र मानने का वर्णन ३३०० वर्ष प्राचीन वेदांग ज्योतिष में भी है। जैसे, - **श्रविष्ठाभ्यो गुणाभ्यस्तान् प्राग्विलग्नान् विनिर्दिशेनद**। अर्थात् गुण (तीन) तीन की गणना कर घनिष्ठा से पूर्व क्षितिज में लगे नक्षत्रों को बताना चाहिए। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि उस समय २७ नक्षत्रों में तीन तीन भाग करके नक्षत्र चक्र के नव भाग किए गए थे। अथर्व ज्योतिष के नव विभागों का सामंजस्य इससे हो जाता है।

लग्न और भाव का महत्व –

पृथ्वी की दैनिक गति के कारण बारह राशियों का चक्र (zodiac) चौबीस घंटों में हमारे क्षितिज का एक चक्कर लगा आता है। इनमें जो राशि क्षितिज में लगी होती है उसे लग्न कहते हैं। यहाँ लग्न और इसके बाद की राशियाँ तथा सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु, केतु आदि ग्रह जन्मपत्री के मूल उपकरण हैं। लग्न से आरंभकर इन बारह राशियाँ को द्वादश भाव कहते हैं। इनमें लग्न शरीरस्थानीय हैं। शेष भाव शरीर से संबंधित वस्तुओं के रूप में गृहीत हैं। जैसे लग्न (शरीर), धन, सहज (बंधु), सुख, संतान, रिपु, जाया, मृत्यु, धर्म, आय (लाभ) और व्यय (खर्च) ये 12 भावों के स्वरूप हैं।

इन भावों की स्थापना इस ढंग से की गई है कि मनुष्य के जीवन की संपूर्ण आवश्यकताएँ इन्हीं में समाविष्ट हो जाती हैं। इनमें प्रथम (लग्न), चतुर्थ (सुख), सप्तम (स्त्री) और दशम (व्यापार) इन चार भावों को केंद्र मुख्य कहा गया है।

वस्तुतः आकाश में इनकी स्थिति ही इस मुख्यता का कारण है। लग्न पूर्व क्षितिज और क्रांति वृत्त का संयोग बिंदु कहा गया है, सप्तम भी पश्चिम क्षितिज और क्रांति वृत्त का संयोग बिंदु ही है। ऐसे ही दक्षिणोत्तर वृत्त और क्रांतिवृत्त का वह संयोग बिंदु जो हमारे क्षितिज से नीचे है चतुर्थ भाव तथा क्षितिज से ऊपर हमारे शिर की ओर (दक्षिणोत्तर वृत्त और क्रांति वृत्त) का संयोग बिंदु दशम भाव कहलाता है। इन्हीं केंद्रों के दोनों ओर जीवनसंबंधी अन्य आवश्यकताओं एवं परिणामों को बतलानेवाले स्थान हैं। लग्न (शरीर) के दाहिनी ओर व्यय है,

बाईं ओर धन का घर है। चौथे (मुख) के दाहिनी ओर बंधु और पराक्रम हैं, बाईं ओर संतान और विद्या हैं। सप्तम स्थान (स्त्री) के दाहिनी ओर शत्रु और व्याधि हैं तो बाईं ओर शत्रु और व्याधि हैं तो बाईं ओर मृत्यु है। दशम (व्यवसाय) के दाहिनी ओर भाग्य और बाईं ओर आय (लाभ) है।

भचक्रस्य समाभागा उक्ता द्वादशराशयः।
राशीनामुदयो लग्नं ते तु मेष-वृषादयः॥

जन्मपत्री द्वारा प्राणियों के जीवन में घटित होनेवाले परिणामों के तारतम्यों को बतलाने के लिए इन बारह राशियों के स्वामी माने गए सात ग्रहों में परस्पर मैत्री, शत्रुता और तटस्थता की कल्पना की गई है और इन स्वाभाविक संबंधों में भी विशेषता बतलाने के लिए तात्कालिक मैत्री, शत्रुता और तटस्थता की कल्पना द्वारा अधिमित्र, अधिशत्रु आदि कल्पित किए गए हैं। इसी प्रकार ग्रहों की ऊँचीनीची राशियाँ भी उपर्युक्त प्रयोजन के लिए ही कल्पित की गई हैं (क्योंकि फलित के ये उच्च वास्तविक उच्चों से बहुत दूर हैं)। इन कल्पनाओं के अनुसार किसी भाव में स्थित ग्रह यदि अपने गृह में हो तो भावफल उत्तम, मित्र के गृह में मध्यम और शत्रु के गृह में निम्न कोटि का होगा। यदि ऐसे ही ग्रह अपने उच्च में हों तो भावफल उत्तम और नीच में हो तो निकृष्ट होगा। इसके मध्य में अनुपात से फलों का तारतम्य लाना होता है। तात्कालिक मैत्री, शत्रुता, समता आदि से स्वाभाविक मैत्री आदि के द्वारा निर्दिष्ट शुभाशुभ परिणामों में और अधिकता न्यूनता करनी होती है। जन्मपत्री में मंगल की राशि मेष और बृश्चिक तथा मकर उच्च है। वृष और तुला शुक्र की राशि तथा मीन उच्च है। मिथुन और कन्या बुध की अपनी राशि तथा कन्या ही उसका उच्च भी है। कर्क चंद्रमा की राशि तथा वृष उच्च है। सिंह सूर्य की राशि तथा मेष मिथुन उच्च है। धनु और मीन बृहस्पति की अपनी राशि तथा कर्क उच्च है। ऐसे ही मकर और कुंभ का स्वामी शनि तथा तुला उसका उच्च है। जन्मपत्री में द्वादश भावों को किस प्रकार अंकित किया जाता है। हिंदू और यूनानी दोनों प्रणालियों में भावों की कल्पना एक ही किंतु 6, 11 और 12 भावों में भेद स्पष्ट है। यद्यपि हिंदू प्रणाली में भाव स शत्रु और रोग दोनों का विचार किया जाता है किंतु उनमें शत्रु भाव ही मुख्य है। यूनानी ज्योतिष में ग्यारहवाँ मित्र भाव और बारहवाँ त्रुभाव है। हिंदू ज्योतिष में 11वाँ आय और बारहवाँ व्यय है।

ग्रह दशा –

प्राणियों के समस्त जीवनकाल के भिन्न भिन्न रूपों में प्रभावित बतलानेवाले ग्रहों की दशाओं और अंतर्दशाओं के-भिन्न अवयव भिन्न-सा अरिष्टप्रद होगा-सा समय सुखदायक तथा कौन-परिणाम हैं। जीवन में कौन, भाग्योदय कब होगा, माता, पिता, बंधु, संतति, स्त्री आदि का सुख कब कैसा रहेगा, विवाह कब होगा, कौन दर की खाक छाननी-सी ग्रहदशा जीवन में समृद्धि उड़ेल देगी और किस ग्रह की दशा में दर-पड़ेगी, सबसे बढ़कर किस समय इस संसार को सदा के लिए छोड़ देना होगा इत्यादि सभी बातों का समय, ग्रहों की दशाओं और अंतर्दशाओं से ही सूचित किया जाता है। जैसा कहा गया है -

किं कुर्वन्ति ग्रहा सर्वे यस्य केन्द्रे बृहस्पति ।

ग्रह दशा की गणना

ग्रह दशा की गणना के लिए जन्मकालसंबंधी चंद्रमा का नक्षत्र प्रधान है। कृत्तिका से गणना करके नौ नौ नक्षत्रों में क्रमशः सूर्य, चंद्र, भौम, राहु, गुरु, शनि, बुध, केतु और शुक्र की दशाओं का भोगकाल 6,10,7,18,16 19,17,7,20 वर्षों के क्रम से 120 वर्ष माना गया है। इस प्रकार कृत्तिका से जन्मकालिक चंद्रमा के नक्षत्र तक की संख्या में 9 का भाग देकर शेष संख्या जिस ग्रह की होगी उसी की दशा जन्मकाल में मानी जाएगी तथा जन्म समय और नक्षत्र के पंचांगीय भोग काल से ग्रह की दशा के जन्म काल से पहले व्यतीत और जन्म के बाद के भोग काल का निर्णय करके भावी फलादेश को प्रस्तुत किया जाता है। यदि ग्रह कुंडली में अपने गृह या मित्र के गृह में हो अथवा उच्च का हो तो वह जिस भाव का स्वामी होगा, उसका फल उत्तम होगा तथा शत्रु के गृह में अथवा नीच राशि में उसके स्थित होने पर फल निकृष्ट होगा।

अब प्रश्न उठता है कि सभी गणनाएँ तो अश्विनी नक्षत्र से आरंभ की जाती हैं। फिर ग्रहदशा की गणना कृत्तिका से क्यों की जाती है। तथ्य यह है कि हमारा ग्रहदशा संबंधी फलादेश तब से चला आता है जब हमारी नक्षत्र गणना कृत्तिका से आरंभ होती थी। महर्षि गर्ग ने वैदिककाल में दो स्वतंत्र नक्षत्र गणनाओं का उल्लेख किया है-एक कृत्तिकादि और दूसरी धनिष्ठादि। गर्ग वाक्य है कि - **तेषां सर्वेषां नक्षत्राणां कर्मसु कृत्तिका प्रथममाचक्षते श्रविष्ठतु संख्यायापूर्वा लगनानाम** : अर्थात् सभी नक्षत्रों में अग्न्याधान आदि कर्मों में कृत्तिका की गणना प्रथम कही जाती है किंतु धनिष्ठा क्षितिज में लगने वाले नक्षत्रों में प्रथम है रहस्य यह है कि जिस समय कृत्तिका

का तारापुं (कचपिचिया)Equater में था उस समय कृत्तिकादि नक्षत्र गणना का आरंभ हुआ। जब उत्तरायण का आरंभ धनिष्ठा पर होता था धनिष्ठादि गणना का आरंभ हुआ। तैत्तिरीय ब्राह्मण में लिखा है कि **मुखं वा एतन्नक्षाणां यत्कृत्तिका एताह वै प्राच्यै दिशो न च्यवन्ते** अर्थात् कृत्तिका सब नक्षत्रों में प्रथम है। यह उदय काल में पूर्व दिशा से नहीं हटती। यह निश्चय है कि जो ग्रह या नक्षत्र विषुवदृत्त में होता है उसी का उदय पूर्व बिंदु में पृथ्वी तल पर सर्वत्र होता है। कृत्तिका की आकाशीय स्थिति के अनुसार गणना करने पर यह समय लगभग 5100 वर्ष पूर्व का सिद्ध होता है। अतः हमारे फलादेश की ग्रहदशा पद्धति इतनी प्राचीन तो है ही। अब आचार्यों द्वारा इन बारह भावों के विभिन्न नाम एवं उनसे संबंधित विषयों का विवरण प्रस्तुत कर रहे हैं।

प्रथम भाव : इसे लग्न कहते हैं। अन्य कुछ नाम ये भी हैं : हीरा, तनु, केन्द्र, कंटक, चतुष्टय, प्रथमा। इस भाव से मुख्यतः जातक का शरीर, मुख, मस्तक, केश, आयु, योग्यता, तेज, आरोग्य का विचार होता है।

द्वितीय भाव : यह धन भाव कहलाता है। अन्य नाम हैं, पणफर, द्वितीया। इससे कुटुंब-परिवार, दायीं आंख, वाणी, विद्या, बहुमुल्य सामग्री का संग्रह, सोना-चांदी, चल-सम्पत्ति, नम्रता, भोजन, वाकपटुता आदि पर विचार किया जाता है।

तृतीय भाव : यह पराक्रम भाव के नाम से जाना जाता है। इसे भातृ भाव भी कहते हैं। अन्य नाम हैं आपोक्लिम, अपचय, तृतीया। इस भाव से भाई-बहन, दायीं कान, लघु यात्राएं, साहस, सामर्थ्य अर्थात् पराक्रम, नौकर-चाकर, भाई बहनों से संबंध, पडौसी, लेखन-प्रकाशन आदि पर विचार करते हैं।

चतुर्थ भाव : यह सुख भाव कहलाता है। अन्य नाम हैं- केन्द्र, कंटक, चतुष्टया। इस भाव से माता, जन्म समय की परिस्थिति, दत्तक पुत्र, हृदय, छाती, पति-पत्नी की विधि यानी कानूनी मामले, चल सम्पत्ति, गृह-निर्माण, वाहन सुख का विचार करते हैं।

पंचम भाव : यह सुत अथवा संतान भाव भी कहलाता है। अन्य नाम हैं-त्रिकोण, पणफर, पंचमा। इस भाव से संतान अर्थात् पुत्र .पुत्रियां, मानसिकता, मंत्र-ज्ञान, विवेक, स्मरण शक्ति, विद्या, प्रतिष्ठा आदि का विचार करते हैं।

षष्ठ भाव : इसे रिपुभाव कहते हैं। अन्य नाम हैं रोग भाव, आपोक्लिम, उपचय, त्रिक, षष्ठ। इस भाव से मुख्यतः शत्रु, रोग, मामा, जय-पराजय, भूत, बंधन, विष प्रयोग, क्रूर कर्म आदि का विचार होता है।

सप्तम भाव : यह पत्नी भाव अथवा जाया भाव कहलाता है। अन्य नाम हैं-केन्द्र, कंटक, चतुष्टय, सप्तम। इस भाव से पति अथवा पत्नी, विवाह संबंध, विषय-वासना, आमोद-प्रमोद, व्यभिचार, आंतों, सांझेदारी के व्यापार आदि पर विचार किया जाता है।

अष्टम भाव : इसे मृत्यु भाव भी कहते हैं। अन्य नाम हैं-लय स्थान, पणफर, त्रिक, अष्टमा। आठवें भाव से आयु, मृत्यु का कारण, दुःख-संकट, मानसिक पीड़ा, आर्थिक क्षति, भाग्य हानि, गुप्तांग के रोगों, आकस्मिक धन लाभ आदि का विचार होता है।

नवम भाव : इसे भाग्य भाव कहलाता है। अन्य नाम हैं त्रिकोण और नवम। भाग्य, धर्म पर आस्था, गुरु, पिता, पूर्व जन्म के पुण्य-पाप, शुद्धाचरण, यश, ऐश्वर्य, वैराग्य आदि विषयों पर विचार इसी भाव के अन्तर्गत होता है।

दशम भाव : यह कर्म भाव कहलाता है। अन्य नाम हैं- केन्द्र, कंटक, चतुष्टय-उपचय, राज्य, दशम। दशम भाव से कर्म, नौकरी, व्यापार-व्यवसाय, आजीविका, यश, सम्मान, राज-सम्मान, राजनीतिक विषय, पदाधिकार, पितृ धन, दीर्घ यात्राएं, सुख आदि पर विचार किया जाता है।

एकादश भाव : यह भाव आय भाव भी कहलाता है। अन्य नाम हैं- पणफर, उपचय, लब्धि, एकादश। इस भा से प्रत्येक प्रकार के लाभ, मित्र, पुत्र वधू, पूर्व संपन्न कर्मों से भाग्योदय, सिद्धि, आशा, माता की मृत्यु आदि का विचार होता है।

द्वादश भाव : यह व्यय भाव कहलाता है। अन्य नाम हैं-अंतिम -, आपोक्लिम, एवं द्वादश। इस भाव से धन व्यय, बारीं आंख, शैया सुख, मानसिक क्लेश, दैवी आपत्तियां, दुर्घटना, मृत्यु के उपरान्त की स्थिति, पत्नी के रोग, माता का भाग्य, राजकीय संकट, राजकीय दंड, आत्म-हत्या, एवं मोक्ष आदि का विचार किया जाता है।

शुभाशुभफलादेशो ज्योतिःशास्त्रप्रयोजनम् ।

स च लग्नबलाधीनः कथितः पूर्वसूरिभिः॥

सन्दर्भग्रन्थसूची –

1. भारतीय ज्योतिष- नैमीचन्द्र शास्त्रीकृत, ।
2. सिद्धान्तशिरोमणि, श्रीमान्भास्कराचार्य चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी ।
3. नारदसंहिता – महर्षिनारद विरचित, मोती लाल वाराणसी, नई- दिल्ली ।
4. बृहज्जातक –दैवज्ञवहारमिहिर विरचितः, चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी ।
5. मुहूर्तमार्तण्ड –दैवज्ञनारायण विरचित, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी ।
6. अथर्व ज्योतिष- मोती लाल वाराणसी, नई- दिल्ली ।
7. मुहूर्तचिन्तामणि – चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी ।